संत गुरु रविदास वाणी में अप्रस्तुत विधान

Dr. Deep Chand

Scholar, Hindi Department, Kurukshetra University, Kurukshetra – 136119

फ्प्रस्तुत ;उपमेयद्ध के सदृश्य अप्रस्तुत ;उपमानद्ध का निर्देश करना अप्रस्तुत विधन कहलाता है।य्1 यह सादृश्य रूप–रंग, आकार, क्रिया आदि बहुविध तत्त्वों को लक्ष्य में रखकर किया जाता है। भारतीय काव्यशास्त्रा में सादृश्यमूलक अलंकारों का एकमात्रा आधर–अप्रस्तुत विधन और इन अलंकारों में सर्वप्रथम उपमा अलंकार है, क्योंकि यही अलंकार ही शेष सभी सादृश्यमूलक अलंकारों का प्राणभूत–उपजीव्य है। प्राचीन आलंकारिकों में भामह, दण्डी, उदभट् आदि ने इस विषय पर गम्भीर एवं सूक्ष्म विचार किया है।

अलंकार सि(ान्त का प्रवर्तक भामह है। भामह का अनुकरण दण्डी ने किया और दण्डी का उदभट् ने। इन आचार्यों की निम्नोक्त मान्यताओं से स्पष्ट है कि वे अलंकार को काव्य का सर्वस्व एवं अनिवार्य तत्त्व स्वीकार करते थे–

भामह ने अलंकार को काव्य का एक आवश्यक आभूषक तत्त्व मानते हुए कहा है कि फ्अनेक आचार्यों द्वारा प्रस्तुत रूपक आदि अलंकार ;काव्य में इस प्रकार आवश्यक है जिस प्रकारद्ध किसी नारी का सुन्दर मुख भी आभूषणों के बिना शोभित नहीं होता।य्2

ये आचार्य काव्य के सभी शोभाकारक धर्मों को अलंकार नाम से अभिहित करने के पक्ष में है। दण्डी के शब्दों में–फ्काव्यशोभाकरान् र्ध्मान अलंकरान् प्रचक्षते।य्3 इसका तात्पर्य यह है कि अनुप्रास, उपमा आदि तो अलंकार हैं ही, गुण रस, भाव, रसाभास, भावाभास आदि भी इसी नाम से अभिहित होते हैं।

पहिन्दी साहित्य में भी हमें बहुत से ऐसे उदाहरण प्राप्त होते हैं जिनमें केवल अलंकार के कारण अस्पुफट व्यंग्यार्थ अथवा काव्यचमत्कार का उद्बोध होता है–'हरि स्वामी के चरणों की वन्दना करता हूं'–फ्यदि सूरदास केवला इतना मात्रात्रा कहते तो यह केवल एक भक्त का सीध–सा वक्तव्य मात्रा होता, पर 'बन्दौ चरण–कमल हरि राई' में रूपक अलंकार द्वारा भक्ति की उत्कटता घोषित होती है।य्4

फ्अब तक यह मान्यता रही है कि शैलीविज्ञान एक और भाषाविज्ञान के उपांग के रूप में हमारे सामने आया है। तो दूसरी ओर आलोचना प्रणाली के रूप में। 'शैली' भाषा का विशिष्ट चयन–संयोजन का ही परिणाम होती है। सामान्य चयन–संयोजन कभी साभिप्राय रूप में अग्रप्रस्तुत होकर हमारा ध्यान आकर्षित करता हुआ अपना साभिप्रायता को उजागर कर उठता है। साहित्य में इस प्रकार की 'शैली' का अध्ययन ही शैलीविज्ञान कहलाता है।य्5

संत विलक्षण होते हैं, वे इस मायामय संसार में, कमलवत् निःसंग रहते हैं। ग्रहस्थाश्रम में रहना उनके लिए बन्धन का कारण नहीं होता, क्योंकि वे अपने लिए नहीं जीते। उनकी वाणी एक काल और देश की वाणी नहीं है। यह सनातन और सार्वभौम हैं। सम्पूर्ण भारतवर्ष में जिन महान सन्तों का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। सन्त रविदास उनमें प्रमुख हैं। उनकी गणना भक्ति युग अथवा मध्यकाल के गणमान्य स्वामी रामानंद जी के द्वादस शिष्यों में सम्मानपूर्वक से की जाती हैं। सन्त कबीर ने भी कहा है–फ्सन्तन में रविदास सन्त हैं।य्6 सन्त रविदास जी का कृतित्व एवं व्यक्तित्व बड़ा ही उज्ज्वल है।

शैलीविज्ञान 'शैली' और 'विज्ञान' के संयोग से बना एक सामासिक पद है। इन दिनों हिन्दी आदि भाषाओं में 'साहित्यिक अभिव्यक्ति की प(ति' के अर्थ में शैली शब्द का प्रयोग चल रहा है। इस दृष्टि से यह प्रयोग पुराना नहीं है और कालान्तर में अंग्रेजी के सम्पर्क में आने के बाद 'स्टाइल' के समानार्थी रूप में प्रचलित हुआ हैं। भोलानाथ तिवारी ने इस विषय में अपना मत प्रकट करते हुए कहा है–फ्शैली भाषिक अभिव्यक्ति का वह विशिष्ट ढंग है जो प्रयोक्ता के व्यक्तित्व विषय, विधा, काल, साहित्यिक धारा तथा स्थान आदि से सम्ब(होता है और जो चयन, विचलन, समानान्तरता, अप्रस्तुत विधान आदि भाषिक सामान्य अभिव्यक्ति के लिए असुलभ उपकरणों एवं उनके संयोजन पर आधृत होता है।य्7

शैलीविज्ञान के प्रमुख घटकों में हम चयन, विचलन, समानान्तरता, अप्रस्तुत विधान, प्रोक्ति, विरलन की गणना करते हैं।

अतः संत गुरु रविदास वाणी का अप्रस्तुत विधान के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन यहाँ द्रष्टव्य हैं।

साहित्य में प्रस्तुत का विधान करना उसकी व्यवस्था करना अप्रस्तुत विधान कहलाता है। अप्रस्तुत काव्य भाषा का बड़ा ही सशक्त उपकरण है। सामान्य भाषा का मुख्य भेदक तत्त्व अप्रस्तुत विधान ही है। सामान्य भाषा अप्रस्तुत का प्रयोग नहीं करती वह कहेगी–फ्आँखें सुन्दर हैं।य् परन्तु काव्य भाषा अपनी बात को प्रभावशाली आकर्षक एवं बिम्बात्मक बनाने के लिए अप्रस्तुत की सहायता से कहेगी–फ्आँखें झील–सी है।य्

अप्रस्तुत का आधार साम्य या सादृश्य हैं। प्रस्तुत तथा अप्रस्तुत के बीच साम्य या सादृश्य कई प्रकार का हो सकता है।

;कद्ध रूप साम्य ;खद्ध आकार साम्य ;गद्ध प्रभाव–साम्य ;घद्ध धर्म

साम्य ;घद्ध क्रिया–साम्य।

रूप साम्य अप्रस्तुत विधान से तात्पर्य है–धर्म के आधार पर समानता जैसे–

फ्तुम मकुतल सुपेद सपी अत्ल, हम बपुरे जस कीरा।य8

उपर्युक्त उ(रण में धर्म–साम्य लक्षित होता है। यहाँ पर परमात्मा को श्वेत रेशमी मखमल के समान बताया गया है और स्वयं को काले पत्थर के समान बताया गया है। अतः यहाँ पर धर्म–साम्य लक्षित होता है।

क्रिया साम्य जहाँ पर क्रिया की समानता हो–जैसे–

ज्यूं सुधि आवत पीव की, विरह उठत तन आगि।

ज्यूं चूने की कांकरी, ज्यौं छिरके त्यौं आगि।य9

उपर्युक्त साखी में क्रिया साम्य दृष्टिगोचर होता है। रविदास जी कहते हैं कि जैसे ही उस परमेश्वर रूपी प्रियतम की याद आती है यह शरीर विरह से उसी प्रकार जल उठता है जिस प्रकार आग के पास जाने से ही चूने का पत्थर जलने लगता है। अतः यहाँ पर विरह की तुलना आग और शरीर की समानता चूने की कांकरी से की गयी है।

प्रयोग के आधार पर भी अप्रस्तुत का प्रयोग मिलता है। विशेषण रूप में हमें अप्रस्तुत के प्रयोग प्राप्त होते हैं। विशेषण अपने मूल में अप्रस्तुत–युक्त होते हैं। रविदास वाणी में हमें कई स्थान पर इसके दर्शन होते हैं। जैसे–

फ्यहु माया सब थोथरी, भगति को प्रतिपारि।य10

अवतरित उ(रण में रविदास जी ने माया के थोथेपन पर प्रकाश डाला है। अर्थात् माया के थोथेपन की विशेषता को बताया है।

क्रिया विशेषण के रूप में अप्रस्तुत का सुन्दर प्रयोग हमें रविदास वाणी में प्राप्त होता है। जैसे–

फ्मैला–मैला कपड़ा किताएक् धोऊं।य11

अर्थात् यहाँ पर 'मैला–मैला' में क्रिया विशेषण प्रयुक्त हुआ है।

प्रतीक रूप में मुख्यतः रविदास जी ने अपने आराध्य देव की आराधना को सुन्दर और सबल अभिव्यक्ति देने के लिए प्रतीकों का प्रयोग किया है। जैसे–

फ्प्रभु जी तुम चन्दन हम पानी, जाकी अंग–अंग बास समानी।

प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत्त चंद चकोरा।।य12

प्रस्तुत पद में भक्त रविदास ने सेवक सेव्य भाव द्वारा चन्दन, पानी, चन्द, चकोर के गूढ़ संबंधों के प्रतीकों द्वारा दास्य भाव का चित्राण सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया है।

अप्रस्तुतों का वर्गीकरण साहित्य में अनेकानेक आधारों पर किया जा सकता है।

मूर्त के लिए मूर्त अप्रस्तुत का प्रयोग चाक्षुष सादृश्य पर आधारित होता है। रविदास वाणी में इसके कतिपय उदाहरण हमें प्राप्त होते हैं। जैसे–

फ्मीन पकरि पफांकिओ अरू काटिओ, रांचि किओ बहुबानी

खण्ड–खण्ड करि भोजन कीनो तऊँ न बिसारिओ पानी।।य13

उपर्युक्त पद में 'मीन' मूर्त हैं और 'मीन' प्रतीक हैं स्वयं 'रविदास का' अतः यहाँ पर मूर्त के लिए का प्रयोग है। उपमेय और उपमान दोनों ही मूर्त हैं।

मूर्त के लिए अमूर्त अप्रस्तुत के अनेकों उदाहरण हमें रविदास दर्शन में प्राप्त होते हैं। जैसे–

फ्जब लगि नदी न समुन्द्र समावै, तब लगि बढ़े हंकारा।य14

प्रस्तुत उ(रण में कहा गया है कि जब तक नदी समुन्द्र में नहीं मिल जाती है, तब तक उसका अहंकार बढ़ता ही चला जाता है। अर्थात् जब तक मनुष्य रूपी नदी, उस परमेश्वर रूपी समुन्द्र में मिलकर एकाकार नहीं हो जाती तब तक उसका अहंकार बढ़ता ही चला जाता है। इस प्रकार यहाँ पर मूर्त के लिए अमूर्त का सुन्दर उदाहरण दृष्टव्य है।

अमूर्त के लिए अमूर्त प्रस्तुतों की सुन्दर योजना हमें रविदास के पदों और साखियों में प्राप्त होता है। जैसे–

फ्सूख सरिता महं बड़ि करि, सूझ बूझ मति खोय,

दुख की बदरी पेखि कै, रविदास न दीजिए रोय।।य15

उपर्युक्त पद में रविदास जी ने कहा है कि मनुष्य को सुख रूपी सरिता में डूबकर न तो अपनी सूझ–बूझ खोनी चाहिए और न ही दुःख रूपी बादल को देखकर रोना चाहिए। अतः यहाँ पर सुख सरिता और दुःख के बादल में अमूर्त के लिए अमूर्त भाव का वर्णन मिलता है।

अप्रस्तुत और बिम्बात्मक शैली में बिम्बात्मक शैली का सबस प्रमुख साधन अप्रस्तुत होता है। बिम्ब सादृश्य पर आधारित दृश्य, घ्राव्य, स्वाद्य, श्रव्य, स्पर्श्य आदि अनुभव्य चित्रा होता है। बिम्ब काव्य की अनिवार्य आवश्यकता है। दृश्य बिम्ब का संबंध आंख से होता है। रविदास वाणी में हमें दृश्य बिम्ब के दर्शन होते हैं। जैसे–

फ्लोचर भरि–भरि व्यंबनिहारौ, जाति विचारिन अवर बिचारौ।य16

उपर्युक्त **दृश्य बिम्ब** में कवि साधनारत अवस्था में अपने प्रियतम के दर्शन होने पर उसे लोचन भर–भरकर देख रहा है और उस अगम ज्योति पर भांति–भांति से विचार कर रहा है।

स्पर्श्य बिम्ब का संबंध त्वचा से होता है। रविदास वाणी में इसके सपफल प्रयोग हुए हैं। जैसे–

फरविदास तू कांवचपफलि, तूझहुं न छीवै कोई

ते निज नाव न जाणिया, भला कहाँ तो होई।।य17

संत रविदास ने दैन्य भाव भक्ति द्वारा अपने को अधम और अस्पृश्य बताते हुए कांवचपफलि से उपमित करके स्पर्श्य बिम्ब का सजीव अंकन किया है।

घ्राण्य बिम्ब का संबंध गंध से होता है। जैसे–

फगिरिवन खोजन जाई, घट अभि अन्तर खोजई भाई।

पुहुम मधे ज्यूँ वास बसत हैं, त्यूं सब घट रमहि रघुराई।।य18

उपर्युक्त साखी में गुरु रविदास जी ने मन के अन्दर निवास करने वाले ईश की उपमा पूफल में बसी सुगन्ध से देते हुए सुन्दर अभिव्यक्ति दी हैं।

भावात्मक बिम्ब भाव से सम्बन्धित होते हैं। यथा–

फदारिदु देखि सभ को हंसै, ऐसी दसा हमारी

असटदशा सिधि करतलै, सभ कृपा तुम्हारी।य19

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने अपनी दरिद्रता का वर्णन करते हुए कहा है कि हमारी दरिद्रता को देखकर सब को हंसी आती है, परन्तु इसके साथ ही उन्हें प्रसन्नता भी है कि श्रीराम की कृपा से उन्होंने अठारह सि(ियों को प्राप्त कर लिया है।

अन्त में यही कहा जा सकता है कि रविदास वाणी में प्राप्त अप्रस्तुत विषयानुकूल और भावानुकूल हैं। प्रतीकों का अप्रस्तुत प्रयोग बहुत ही सुन्दर प्राप्त होता है। फ्वास्तव में रविदास वाणी भक्ति की एक ऐसी शैली है, जिसमें ईश्वर साधना के माध्यम से वर्गवाद और जातिवाद की सीमाओं को तोड़ने का प्रयास किया गया है।य20

पाद टिप्पणी :

1. सत्यदेव चौध्री, भारतीय शैलीविज्ञान, पृ. 344
2. सत्यदेव चौध्री, भारतीय काव्यशास्त्रा, पृ. 354
3. काशीनाथ तिवारी, आचार्य दण्डी की साहित्य साध्ना, पृ. 269
4. सत्यदेव चौध्री, भारतीय काव्यशास्त्रा, पृ. 388
5. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु', शैलीविज्ञान और भारतीय काव्यशास्त्रा, तुलनात्मक विमर्श, पृ. 33
6. काशीनाथ उपाध्याय, गुरु रविदास, पृ. 4
7. भोलानाथ तिवारी, शैलीविज्ञान, पृ. 22
8. बी.पी. शर्मा, संत गुरु रविदास वाणी, साखी–2
9. बी.पी. शर्मा, संत गुरु रविदास वाणी, पद–113
10. बी.पी. शर्मा, संत गुरु रविदास वाणी, साखी–26
11. बी.पी. शर्मा, संत गुरु रविदास वाणी, पद–95
12. वही, पद 105
13. वही, पद 169
14. वही, पद 93
15. वही, पद 4
16. बी.पी. शर्मा, संत गुरु रविदास वाणी, पद–112
17. बी.पी. शर्मा, संत गुरु रविदास वाणी, साखी–6
18. बी.पी. शर्मा, संत गुरु रविदास वाणी, पद–119
19. वही, पद–115
20. मीरा गौतम, गुरु रविदास : वाणी एवं महत्त्व, पृ. 419